2

पर्यावरण अर्थव्यवस्था दो-तरफा सम्बन्ध

[TWO-WAY ENVIRONMENT ECONOMY LINKAGE]

पर्यावरण
(ENVIRONMENT)

पर्यावरण दो शब्दों 'परि' तथा 'आवरण' से मिलकर बना है जिसमें परि शब्द का आशय 'चारों ओर से' तथा आवरण शब्द का आशय 'घेरे या ढके हुए' से होता है। पर्यावरण से आशय मानव अथवा किसी जीवधारी के चारों ओर पाए जाने वाले उस आवरण से है जिसमें रहकर वह जीव विशेष रूप से अपना जीवनयापन करता है। दूसरे शब्दों में पर्यावरण से आशय उस समूची भौतिक व जैविक व्यवस्था से है, जिसमें जीवधारी निवास करते हैं तथा वृद्धि कर अपनी स्वाभाविक प्रवृत्तियों का विकास करते हैं।

पर्यावरणविद् पर्यावरण शब्द के स्थान पर Millieu या Habitat शब्द का प्रयोग भी करते हैं जिसका आशय समस्त पारिस्थितिकी (Total Set of Surrounding) से है। इस सन्दर्भ में **फिटिंग** (Fitting) नामक पर्यावरणविद् लिखते हैं, "जीवों के पारिस्थितिकी कारकों का योग (The Totality of Millieu Factors of an Organism) पर्यावरण है।"

ए. जी. टान्सले (A.G. Tansley) के शब्दों में, "प्रभावकारी दशाओं का वह सम्पूर्ण योग जिसमें जीवधारी निवास करते हैं, पर्यावरण कहलाता है।"

सी. सी. पार्क (C. C. Park) के अनुसार, "पर्यावरण का अर्थ उन दशाओं के योग से होता है जो मानव को निश्चित समय में निश्चित स्थानों पर आवृत करती हैं।"

चूंकि पर्यावरण में समस्त भौतिक तथा जैविक परिस्थितियां सम्मिलित होती हैं, अतः पर्यावरण जीवों की क्रियाओं एवं प्रतिक्रियाओं को प्रभावित करने वाली समस्त भौतिक तथा जैविक परिस्थितियों का योग होता है।

पर्यावरण की प्रमुख विशेषताएं
(CHARACTERISTICS OF ENVIRONMENT)

1. अजैविक या भौतिक व जैविक घटक पर्यावरण के महत्वपूर्ण भाग हैं तथा पर्यावरण के अजैव व जैव तत्व अपनी विशेषता के अनुसार पर्यावरण का निर्माण करते हैं।
2. जीवों के चारों ओर की वस्तुएं पर्यावरण का निर्माण करती हैं।
3. पर्यावरण में जीवों का परस्पर सहवास अनिवार्य लक्षण है।
4. पर्यावरण सदैव बदलता रहता है अर्थात् पर्यावरण की प्रकृति गतिशील होती है तथा पर्यावरण की गतिशीलता का प्रमुख कारण सूर्य से प्राप्त ऊर्जा होती है।
5. पर्यावरण परिवर्तनों के प्रति (पर्यावरण में निवास करने वाले) जीव अनुकूलता उत्पन्न करते रहते हैं।
6. पर्यावरण स्व-नियन्त्रण और स्वपोषण पर आधारित है।
7. पर्यावरण में विशिष्ट भौतिक क्रियाएं कार्यरत रहती हैं।
8. पर्यावरण में पार्थिव एकता विद्यमान रहने के साथ-साथ क्षेत्रीय विविधता भी मिलती है।
9. पर्यावरण जैव जगत का निवास क्षेत्र होता है।
10. पर्यावरण में संसाधनों का अपार भण्डार है।

पर्यावरण के तत्व
(ELEMENTS OF ENVIRONMENT)

पर्यावरण में प्रमुख चार घटक सम्मिलित होते हैं :

1. स्थलमण्डल (Lithosphere), 2. जलमण्डल (Hydrosphere), 3. वायुमण्डल (Atmosphere), 4. जैवमण्डल (Biosphere)।

उक्त चार घटकों में **वायुमण्डल पर्यावरण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं गतिशील घटक है, क्योंकि यह वायुमण्डल ही है जिसमें निरन्तर मौसमीय परिवर्तन होते रहते हैं।** वायुमण्डल पृथ्वी सतह से लगभग 32 किमी की ऊंचाई तक मिलता है तथा इसमें अनेक गैसों का मिश्रण मिलता है। शुद्ध व शुष्क वायु में 78 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा 21 प्रतिशत ऑक्सीजन होती है। कार्बन डाइ-ऑक्साइड, हाइड्रोजन, हीलियम तथा ओजोन, आदि वायुमण्डल में अल्प मात्रा में मिलने वाली अन्य गैसें हैं। क्षोभमण्डल, समतापमण्डल, मध्यमण्डल तथा बाह्यमण्डल वायुमण्डल की चार प्रमुख परतें हैं।

पर्यावरण तत्वों की विविधता को दृष्टिगत रखते हुए पर्यावरण के निम्न दो समूह हैं :

(अ) भौतिक तत्व समूह (Physical Group of Elements) या अजैविक कारक (Abiotic Factors)

(ब) जैवीय तत्व समूह (Biotic Group of Elements) या जैविक कारक (Biotic Factors)

(अ) भौतिक तत्व समूह—इस समूह के चार वर्ग हैं :

(i) **वायुमण्डलीय तत्व**—जैसे मौसम ऊर्जा, सूर्य प्रकाश, तापमान, वर्षा, आर्द्रता एवं वायुमण्डलीय गैसें।

(ii) **स्थल जात तत्व**—जैसे उच्चावचन, मिट्टी, चट्टानें तथा खनिज।

(iii) **जलीय तत्व**—जैसे जलराशियों का स्वरूप, धरातलीय जल, भूमिगत जल तथा सागरीय जल।

(iv) **स्थिति जात तत्व**—जैसे तटीय, महाद्वीपीय, द्वीपीय, पर्वतीय, पठारी तथा मैदानी स्थितियां।

(ब) जैविक तत्व समूह—इस समूह में चार वर्ग हैं :

(i) मानव, (ii) पशु-पक्षी, (iii) पेड़-पौधे, (iv) सूक्ष्म जीवधारी।

पृथ्वी पर समस्त जीवधारियों का जीवन-चक्र पर्यावरण की सहायता से ही चलता है। पर्यावरण के अभाव में पृथ्वी पर किसी भी प्रकार के जीव की कल्पना नहीं की जा सकती है।

अर्थव्यवस्था
(ECONOMY)

अर्थव्यवस्था को उस वैधानिक तथा संस्थागत ढांचे के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसके अन्तर्गत आर्थिक क्रियाएं संचालित होती हैं।

इस तरह, अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत कृषि, उद्योग एवं सेवा से सम्बन्धित क्षेत्रों, खानों, दुकानों, बैंकों, स्कूलों, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों आदि को सम्मिलित किया जाता है, जो वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन करते हैं तथा लोगों को रोजगार प्रदान करते हैं। उन वस्तुओं एवं सेवाओं का उपयोग एक देश के लोग करते हैं अथवा विश्व बाजार में निर्यात कर देते हैं।

पर्यावरण : अर्थव्यवस्था सम्बन्ध
(ENVIRONMENT : ECONOMY LINKES)

पर्यावरण तथा किसी देश की अर्थव्यवस्था के बीच प्रत्यक्ष, सहजीवी एवं गहन सम्बन्ध होता है। पर्यावरण अनेक जैविक एवं अजैविक घटकों से मिलकर बना है। जब ये समस्त घटक निश्चित अनुपात में होते हैं तो एक सुन्दर एवं स्वच्छ पर्यावरण का निर्माण करते हैं। मनुष्य की भोगकारी प्रवृत्ति से प्रेरित तीव्र आर्थिक विकास की लालसा ने इन घटकों के अनुपात को बिगाड़ दिया है। इसके फलस्वरूप पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी को अपूरणीय क्षति पहुंच रही है। पर्यावरण की गुणवत्ता में होने वाले ह्रास ने वायु, जल, ध्वनि एवं मृदा-प्रदूषण के रूप में अपना विकराल रूप दिखाना प्रारम्भ कर दिया है। मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार भारत में आर्थिक विकास के फलस्वरूप भारी पर्यावरणीय ह्रास हुआ है। **भारत में वर्तमान समय में लगभग** 10 से 12 मिलियन अमेरिकी डॉलर के बराबर पर्यावरणीय क्षति का आकलन किया गया है जो इसके सकल घरेलू उत्पाद का 4.5 से 6 प्रतिशत तक होता है।

आज विश्व के किसी भी देश के लिए आर्थिक विकास की प्रक्रिया पर पाबन्दी लगाकर विकास को बन्द कर देना संभव नहीं है क्योंकि आर्थिक विकास से ही देश की प्रगति संभव है। फिर भी इस बात की आवश्यकता है कि वर्तमान पारिस्थितिक तन्त्र को सुधारने एवं भविष्य में विकासात्मक नीतियों के निर्धारण एवं उनके सुचारु रूप से क्रियान्वयन के लिए पारिस्थितिक विकास की अवधारणा को अपनाया जाए।

आज किसी देश के आर्थिक समृद्धि की अवधारणा को पर्यावरण की गुणवत्ता से जोड़कर देखा जाने लगा है। वर्तमान में आर्थिक विकास की माप सकल राष्ट्रीय उत्पाद/प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि जैसे मात्रात्मक तत्वों से नहीं की जाती है बल्कि सामाजिक कल्याण, जीवन स्तर में वृद्धि एवं 'मानव विकास सूचकांक' के स्तर में वृद्धि को आर्थिक विकास का मापदण्ड माना जाता है। विगत कुछ वर्षों से यह धारणा बलवती होती जा रही है कि उच्च गुणवत्ता वाले जीवन के लिए पर्यावरण सुरक्षा/संरक्षण अति आवश्यक है। अतः किसी देश के आर्थिक विकास को पर्यावरण से सम्बद्ध किए जाने की आवश्यकता है। आज यह अनुभव किया जाने लगा है कि आर्थिक विकास एवं पर्यावरण एक-दूसरे पर निर्भर ही नहीं करते बल्कि एक-दूसरे के पूरक भी हैं। पर्यावरण अपघटन से किसी देश की राष्ट्रीय आय में गिरावट आती है। अनुमान है कि पर्यावरण अपघटन से विश्व अर्थव्यवस्था की आय में 5% से 10% तक की कमी आती है। पर्यावरण संरक्षण के अभाव में विवेकपूर्ण एवं न्यायपूर्ण विकास की कल्पना करना व्यर्थ होगा। अन्य शब्दों में, आर्थिक विकास एवं मानव के उच्च गुणवत्ता युक्त जीवन के लिए पृथ्वी के संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग आवश्यक एवं उचित है। इस दृष्टि से वर्तमान में सन्तुलित, समन्वित एवं सतत **पारिस्थितिक विकास** की कल्पना की गई है जिसके अन्तर्गत विकासात्मक योजनाओं के साथ पर्यावरणीय मुद्दों को समन्वित किया जाता है। इस तरह अर्थव्यवस्था को विकसित करने की जो भी परियोजनाएं बनाई जाती हैं उनमें पर्यावरण के नकारात्मक प्रभावों को दूर करने, सामाजिक कल्याण स्तर को अधिकतम करने की नियोजित रणनीति अपनाई जाती है।

जिस देश में पर्यावरण सुरक्षित/संरक्षित है तथा प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन पर्यावरण को हानि पहुंचाए बिना किया जाता है उस देश की अर्थव्यवस्था समृद्ध एवं सम्पन्नता का प्रतीक समझी जाती है।

पर्यावरण पर आर्थिक विकास का प्रभाव
(IMPACT OF ECONOMIC DEVELOPMENT ON ENVIRONMENT)

मानव अपने जीवन की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रकृति पर निर्भर रहता है। दिनों-दिन बढ़ती जा रही मानवीय आवश्यकता एवं उनकी पूर्ति के लिए हो रहे निरन्तर विकास के फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों का दोहन भी तेजी से बढ़ता जा रहा है जिसके फलस्वरूप प्रकृति अपना सन्तुलन बनाए रखने में स्वयं को असमर्थ अनुभव कर रही है। प्रकृति में असन्तुलन का प्रत्यक्ष प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है। प्रकृति में असन्तुलन का तात्पर्य है पर्यावरण में असन्तुलन अर्थात् पर्यावरणीय गुणों में ह्रास।

आर्थिक विकास के फलस्वरूप निम्नलिखित पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं :

1. **वन विनाश का पर्यावरण पर प्रभाव**—आर्थिक विकास के लिए मानव को विस्तृत भूमि की आवश्यकता होती है। भूमि प्राप्त करने के लिए वनों को काटना आवश्यक हो जाता है। भारत में वनों के विनाश का क्रम मानवीय क्रियाकलापों के विस्तार से प्रारम्भ हुआ है। बढ़ती जनसंख्या की कृषि भूमि, आवास, उद्योग, परिवहन, आदि आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए वनों को साफ किया जाने लगा है।

वन विनाश का सबसे अधिक दुष्परिणाम पर्यावरणीय व पारिस्थितिकी असन्तुलन है। वनों के नष्ट होने से उनमें स्थित प्राणियों के निवास स्थल भी नष्ट हो गए। अतः भारत की जैव विविधता पर संकट आ गया। वनस्पति व प्राणियों की अनेक प्रजातियां लुप्त हो गई हैं तो अनेक लुप्त होने के कगार पर हैं। वनों के अभाव में वायुमण्डल में ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करने वाली गैसों की मात्रा में निरन्तर वृद्धि, भूक्षरण, भूस्खलन, अनावृष्टि, बाढ़, वन्य प्राणियों का ह्रास व मरुस्थलीकरण, आदि पर्यावरणीय समस्याओं में वृद्धि होगी।

2. **उत्खनन का पर्यावरण पर प्रभाव**—आर्थिक विकास को गति प्रदान करने के लिए, औद्योगीकरण आवश्यक है और उद्योगों की स्थापना के लिए खनिज पदार्थों का उत्खनन अत्यावश्यक है। विश्व के विभिन्न देशों में खनन संसाधनों को प्राप्त करने के लिए उत्खनन होता है। जब उत्खनन सघन वन क्षेत्रों में संचालित होता है तो अमूल्य वन सम्पदा नष्ट हो जाती है। उत्खनन के दौरान वायु प्रदूषण एवं ध्वनि प्रदूषण अत्यधिक

होता है। उत्खनन के बाद बेकार छोड़े गए गर्त अन्य किसी उपयोग में नहीं आते हैं। खानों की खुदाई से निकले मलबे के ढेर जहां डालते हैं, उसके नीचे की भूमि बेकार हो जाती है। शिवालिक क्षेत्र में चूना पत्थरों की खदानों से पर्यावरण की अपार क्षति हुई है। धनबाद, हजारीबाग कोयला क्षेत्रों में अवशिष्ट खनिज के जल स्रोतों में प्रवाह से विस्तृत भूमि बेकार हो गई है। इससे इन क्षेत्रों के पर्यावरण का भारी ह्रास हुआ है।

3. **औद्योगीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव**—विश्व के विकसित देश औद्योगिक देश हैं अर्थात् आर्थिक विकास का आधार औद्योगीकरण है। आर्थिक प्रगति के लिए औद्योगिक विस्तार एवं औद्योगीकरण आवश्यक है, किन्तु औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के लिए विस्तृत भूखण्ड की प्राप्ति के लिए पहले वन विनाश करना पड़ता है। उत्पादन इकाइयों से वांछित उत्पादन के अतिरिक्त हानिकारक अवशिष्ट पदार्थ, प्रदूषित जल, जहरीली गैस, रासायनिक अवशेष, धूल, राख, धुआं, आदि भी निकलते हैं। औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाले प्रदूषक जल, वायु, मिट्टी में मिलकर मिट्टी को प्रदूषित करते हैं और पर्यावरण को भी बिगाड़ देते हैं।

इस तरह पर्यावरण संकट का दूसरा प्रमुख कारण तीव्र औद्योगिक विकास है। आज के विश्व में आर्थिक सामाजिक व्यवस्था को नया आयाम देने के लिए तीव्र औद्योगिक विकास पर जोर दिया जा रहा है। विगत डेढ़ सौ वर्षों से औद्योगिक देशों में बढ़ता उत्पादन विश्व के लिए प्रलोभन बन गया है। अतः सभी देश सोचते हैं कि औद्योगिक उन्नति से ही आर्थिक-सामाजिक विकास सम्भव है। औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् पहले यूरोप में तथा बाद में विश्व के अन्य भागों में उद्योगों की स्थापना बड़े पैमाने पर हुई। उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र गति से दोहन होने लगा। तीव्र औद्योगीकरण से लोगों का जीवन-स्तर तो बढ़ा, किन्तु पर्यावरण को अत्यधिक हानि हुई। औद्योगीकरण से वनों का विनाश, उद्योगों से निकलने वाले हानिकारक पदार्थों से प्रदूषण, जल संकट, अति नगरीकरण, आदि समस्याएं उत्पन्न हुईं।

4. **तीव्र तकनीकी विकास**—पर्यावरण संकट का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि बीसवीं शताब्दी में औद्योगिक विकास के कारण विज्ञान और तकनीकी विकास भी तेजी से हुआ है। मानव ने तकनीकी के क्षेत्र में जो प्रगति की उसे तकनीकी क्रान्ति कहा जाता है। इसका लाभ उद्योग, कृषि, परिवहन, चिकित्सा, आदि विभिन्न क्षेत्रों को प्राप्त हुआ है, किन्तु नई तकनीक से निर्मित विभिन्न उपभोक्ता सामग्री मानव स्वास्थ्य तथा पर्यावरण पर बुरा प्रभाव डाल रही है। तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप प्लास्टिक, कृत्रिम रेशा, कृत्रिम रबर, कृत्रिम उर्वरक, कृत्रिम घास, इत्यादि अनेक संश्लिष्ट पदार्थ दैनिक जीवन में प्रयुक्त किए जा रहे हैं। इनके प्रयोग से जहां प्राकृतिक संसाधनों पर दबाव कम हुआ है। वहीं अनेक पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो गई हैं। प्रकृति में अपघटन न होने के कारण प्लास्टिक के कचरे का निपटान मानव के समक्ष एक चुनौती बन गया है, इसका मानव के स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। आणविक विस्फोटों व घातक हथियारों से विश्व पर्यावरण को सर्वाधिक खतरा है।

5. **अनियोजित विकास एवं नगरीकरण**—अनियोजित विकास पर्यावरणीय स्थिति को खतरनाक बना देता है और समाज को पारिस्थितिकीय संकट के कगार पर खड़ा कर देता है। विकसित देश अपने विकास की दिशा का निर्धारण करते समय विभिन्न प्रकार की सामाजिक-आर्थिक प्रणालियों का अध्ययन करते हैं। भारत जैसे विकासशील देश में जहां औद्योगीकरण को योजना का प्रमुख अंग बनाया गया है, किन्तु उसका नियन्त्रण कैसे और कौन करे, वह किस कीमत पर उपलब्ध होता है और निकट भविष्य में उसके क्या परिणाम हो सकते हैं, आदि प्रश्नों पर विचार नहीं किया जाता है। हमारे देश में शहरों का अनियन्त्रित विकास, शहरों में आबादी का संकेन्द्रण, गांवों से शहरों की ओर बढ़ता पलायन, आदि कारकों में वृद्धि से पारिस्थितिकीय पक्षों पर बहुत अधिक दबाव पड़ रहा है। शहरों की इस तरह की सामाजिक-आर्थिक दशाओं से व्यक्तियों का स्वास्थ्य बिगड़ सकता है। शहरों के अनियोजित विकास के कारण मलिन बस्तियों की संख्या में वृद्धि, शहरों में वाहनों की संख्या में वृद्धि के कारण बढ़ता ध्वनि एवं वायु प्रदूषण, महानगरों में प्रतिदिन एकत्रित होने वाले कूड़ा-करकट, मल-मूत्र व ठोस अपशिष्ट के निस्तारण की समस्या, दुर्गन्ध मारता कूड़े का ढेर नगरीय पर्यावरण को प्रदूषित करने के साथ ही विभिन्न महामारियों का कारण बनता है। यही कारण है कि अब पारिस्थितिकीय दृष्टि से सबसे ज्यादा हानिकारक उद्योगों का सामाजिक विरोध किया जा रहा है।

आज विश्व के किसी भी देश के लिए आर्थिक विकास के साधनों तथा प्रक्रिया को बन्द कर देना सम्भव नहीं है, क्योंकि आर्थिक विकास से ही देश की प्रगति सम्भव है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि औद्योगीकरण, नगरीकरण, क्रियात्मक कार्यों, बहुउद्देश्यीय नदी परियोजनाओं का क्रियान्वयन पर्यावरणीय दृष्टिकोणों को ध्यान में रखते हुए किया जाएगा।

पर्यावरण अर्थव्यवस्था संतुलन दो तरफा सम्बन्ध
(ENVIRONMENT ECONOMY EQUILIBRIUM TWO WAY LINKAGE)

मानवीय आर्थिक क्रियाकलापों ने प्रकृति के विभिन्न घटकों में हस्तक्षेप कर पर्यावरण संतुलन को बिगाड़ दिया है। पूंजी प्रधान औद्योगीकरण की क्रिया ने पर्यावरण को क्षतिग्रस्त करने में महती भूमिका निभाई है। पर्यावरण अपघटन का औद्योगीकरण, नगरीकरण तथा विस्तृत एवं सघन कृषि से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। औद्योगीकरण ने वायु एवं जल प्रदूषण तथा औद्योगिक अपशिष्ट प्रदूषण को जन्म दिया है। औद्योगीकरण से ही नगरीकरण का विस्तार हुआ है जिसके फलस्वरूप आवास की समस्या, परिवहन जन्य वायु एवं ध्वनि प्रदूषण की समस्या एवं मल-जल तथा कूड़ा-करकट निस्तारण की समस्या उत्पन्न हो गई है। औद्योगीकरण की इस प्रक्रिया ने प्राकृतिक संसाधनों, कच्चे माल तथा ऊर्जा के पारम्परिक स्रोतों का बड़ी तेजी से विदोहन किया है। इससे पर्यावरण एवं पारिस्थितिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो गई है। तकनीकी परिवर्तन ने 'उपयोग करो और फेंको' की दशा को जन्म दिया है जिसने प्रदूषण की समस्या को और अधिक गम्भीर बना दिया है। आज यह धारणा बलवती होती जा रही है कि प्रौद्योगिकीय प्रगति के माध्यम से मनुष्य द्वारा प्रकृति पर विजय करने की लालसा पृथ्वी से समस्त जीव-जन्तुओं को विनष्ट कर सकती है।

पर्यावरण प्रदूषण तथा आर्थिक क्रियाकलापों के बीच सम्बन्ध को पदार्थ संतुलन मॉडल (Material Balance Model) द्वारा निम्नवत प्रदर्शित किया जा सकता है। पदार्थ संतुलन मॉडल में पर्यावरण को एक बड़े आवरण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जो सम्पूर्ण आर्थिक प्रणाली को चारों ओर से घेरे हुए है। इसका अर्थव्यवस्था से वही सम्बन्ध होता है जो गर्भस्थ शिशु का उसकी मां से होता है।

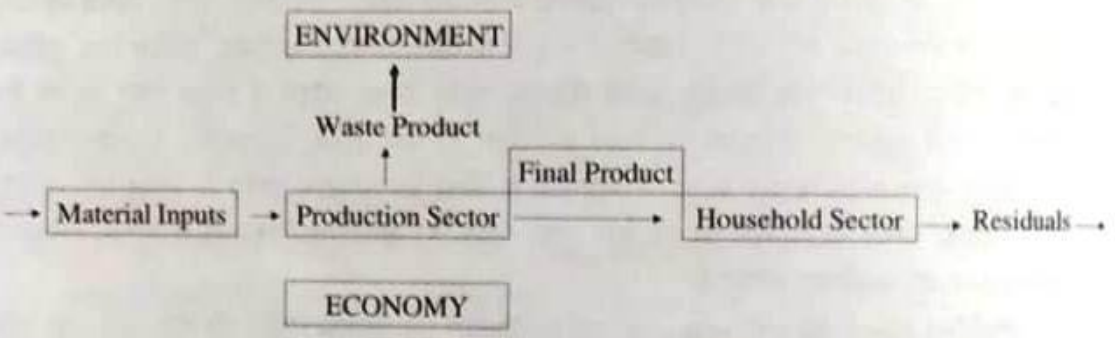

चित्र : प्रदूषण एवं आर्थिक क्रियाकलाप

चित्र में उत्पादन क्षेत्र तथा घरेलू क्षेत्र के बीच पारम्परिक चक्रीय प्रवाह को प्रदर्शित किया गया है। पर्यावरण से प्राकृतिक संसाधनों एवं कच्चे माल का प्रवाह आगतों के रूप में उत्पादन क्षेत्र की ओर होता है। जहां पर इन्हें उपभोक्ता वस्तुओं में परिवर्तित किया जाता है। औद्योगिक क्रिया से उत्पन्न हानिकारक निष्प्रयोज्य पदार्थ (Waste material), प्रदूषित जल, जहरीली गैसें, रासायनिक अवशेष, धूल, राख, धुआं आदि का प्रवाह वातावरण में होता है। उपभोक्ता वस्तुओं का प्रवाह घरेलू क्षेत्र की ओर होता है। इसके बाद अपशिष्ट (Residual) के रूप में इसका प्रवाह पुनः पर्यावरण की ओर होता है। यह अपशिष्ट उप-उत्पाद के रूप में होते हैं, जो घरेलू क्षेत्र की उपभोग क्रियाओं द्वारा उत्पन्न होते हैं। इस तरह उत्पादन एवं उपभोग क्षेत्र से अपशिष्टों का प्रवाह पर्यावरण की ओर होता है। इस प्रकार के भौतिक प्रवाह भौतिकी के आधारभूत नियम का पालन करते हैं जहां पदार्थों के संरक्षण की बात कही गई है।

एक ऐसी बंद अर्थव्यवस्था जहां आयात-निर्यात का समावेश नहीं है तथा शुद्ध पूंजी स्टॉक का संचयन नहीं होता में प्रकृति एवं पर्यावरण को वापस किए जाने वाले अपशिष्ट की मात्रा, आधारभूत ईंधन, खाद्यान्न,

खनिज तथा अन्य प्रकार के कच्चे माल जो उत्पादन के उपादान के रूप में प्रयुक्त होकर उत्पादन क्रिया में भाग लेते हैं, के बराबर होती है। इस अवधारणा को पदार्थ संतुलन सिद्धान्त कहा जाता है।

पर्यावरण अर्थव्यवस्था से जुड़े मुद्दे (Issues Linked with Environment Economy)

पदार्थ संतुलन सिद्धान्त इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि पर्यावरण से अर्थव्यवस्था को प्राप्त होने वाले पदार्थों की मात्रा बराबर होनी चाहिए अर्थव्यवस्था के अपशिष्ट पदार्थों की मात्रा के, परन्तु विभिन्न प्रकार की विसंगतियों के फलस्वरूप यह संतुलन स्थापित नहीं हो पाता है जिसके कारण अनेक प्रश्न खड़े होते हैं। आर्थिक विकास की प्रक्रिया तथा मानव निर्मित एवं प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग से सम्बन्धित पर्यावरण अर्थव्यवस्था से जुड़े निम्नलिखित मुद्दे उठाए जा सकते हैं :

1. क्या बाजार व्यवस्था पर्यावरणीय विवाद का निपटारा कर सकती है?
2. क्या बाजार व्यवस्था विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय प्रभाव की देखभाल कर सकती है?
3. क्या बाजार व्यवस्था धन तथा आय का पुनर्वितरण कर सकती है जिससे कि समता एवं सामाजिक न्याय की स्थापना की जा सके जिसे सामाजिक पर्यावरण का साम्य माना जाता है?
4. पुनरुत्पादनीय संसाधनों का अनुकूल उपयोग किस तरह किया जाए?
5. भावी पीढ़ियों की वरीयताओं को किस तरह सम्मिलित किया जाए?
6. पर्यावरणीय परियोजनाओं के मूल्यांकन हेतु कौन-सी समय बट्टादर (time discount) उपयुक्त होगी?
7. बाह्यताओं का मूल्यांकन किस तरह किया जाए?
8. सामाजिक, आर्थिक ढांचे तथा सांस्कृतिक विरासत पर प्रदूषण के प्रभाव को कैसे मापा जाए?
9. लोग अपने अधिमानों को व्यक्त करने के लिए किन आदर्श मूल्यों का प्रयोग करते हैं?
10. क्षतिपूर्ति दरों का निर्धारण किस तरह किया जाए?

पर्यावरण एवं अर्थव्यवस्था की सम्बद्धता से सम्बन्धित उपर्युक्त मुद्दे अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। इन मुद्दों पर विचार किए बिना अर्थव्यवस्था एवं पर्यावरण के बीच संतुलन बनाए रखना कठिन होगा। पर्यावरणीय असंतुलन की दशा में किसी भी तरह का आर्थिक विकास सामाजिक कल्याण फलन के प्राप्ति की प्रक्रिया को अवरुद्ध कर देगा।

आवश्यकता एवं विलासिता के रूप में पर्यावरण
(ENVIRONMENT AS A NECESSITY AND LUXURY)

पर्यावरण भौतिक तत्वों, शक्तियों और परिस्थितियों का एक ऐसा समुच्चय है, जिसका प्रभाव जैव जगत के विकास चक्र पर पड़ता है। इसको मुख्यतया दो प्रधान समूहों—प्रथम अजैव तत्वों; जैसे जलवायु, स्थल, जल, मृदा, खनिज चट्टानें एवं भौगोलिक स्थितियां तथा दूसरा जैव तत्वों जिनमें पौधे, जीव-जन्तु व मानव प्रमुख हैं, में बांटा जा सकता है। पर्यावरण की प्रमुख विशेषता इसकी साधन सम्पन्नता है, जो प्रकृति प्रदत्त एवं एक-दूसरे पर निर्भर हैं। ये प्राकृतिक संसाधन ही मानव के भौतिक विकास के आधार हैं।

स्वच्छ पर्यावरण मानव जीवन का आधार और उसकी आवश्यक आवश्यकताओं में से सबसे प्रमुख है। पर्यावरण के मूल ढांचे का निर्माण करने वाले तत्व जल एवं वायु के बिना जीव-जगत की कल्पना ही नहीं की जा सकती। किसी देश के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक प्राकृतिक संसाधन-भूमि, जलवायु, वनस्पति, खनिज, आदि पर्यावरण के अंग हैं। पृथ्वी हमको अन्न, जल, जीवन के लिए स्वच्छ वायु प्रदान करती है तथा समस्त वनस्पतियों एवं जीवधारियों का पालन पोषण करती है। इस तरह प्राकृतिक संसाधनों से युक्त स्वच्छ वातावरण की आवश्यकता मानव जगत को सदैव से रही है। मनुष्य की आवश्यक आवश्यकताएं—भोजन, पानी एवं सांस लेने के लिए स्वच्छ वायु पर्यावरण से ही प्राप्त होती हैं। इस तरह एक स्वच्छ पर्यावरण की उपलब्धता किसी देश की अर्थव्यवस्था एवं मानव जीवन के लिए एक आवश्यक आवश्यकता है।

पर्यावरण में उपलब्ध नदियों, वनों, पर्वतों, झीलों, जल-प्रपातों तथा समुद्र तटों का सौन्दर्य पर्यटन के माध्यम से मनुष्य की विलासिता सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य को आज मानव

विलासिता के रूप में पर्याप्त दोहन कर रहा है। विलासिता की भौतिक चीजें—रेफ्रीजरेटर, एअरकण्डीशनर, यातायात के दुर्तगामी वाहनों के उत्पादन में प्रयुक्त आगतें हमें पर्यावरणीय तत्वों से ही प्राप्त होती हैं। प्राकृतिक संसाधनों से निर्मित विलासिता की वस्तुओं ने आज समाज की जीवन शैली को ही बदल दिया है। आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति एवं विलासिता वस्तुओं के निर्माण में प्राकृतिक संसाधनों के अनियोजित दोहन ने आज पर्यावरण के घटकों को असाधारण एवं गम्भीर रूप से असंतुलित कर दिया है जिसके घातक परिणाम दिखाई देने लगे हैं।